ISSN: 2393-8900 IMPACT FACTOR : 2.7825(UIF) VOLUME - 5 | ISSUE - 10 | JUNE - 2019

HISTORICITY RESEARCH JOURNAL

बालेन्दु शेखर तिवारी का व्यंग्यकर्म

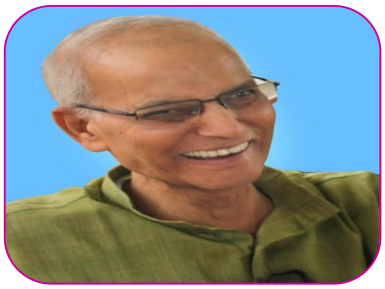

डॉ. श्रीधर पी. डी.
विभागाध्यक्ष्य - हिन्दी विभाग,
क्रिस्तु जयन्ती कालेज, के. नारायणपुरा, कोत्तनूर पोस्ट, बेंगलूरु.

अब तक हुए 'साहित्य शोध और अध्ययन' से स्पष्ट है कि हिन्दी साहित्य में 'व्यंग्य विधा' का अब अलग ही महत्व है। हिन्दी साहित्य में व्यंग्य विधा की स्थापना के लिए अनेक संघर्ष होते रहें। आधुनिक साहित्य सृजन के क्षेत्र में स्वतंत्रतापूर्व भारतेन्दु साहित्य काल में ही व्यंग्य प्रत्येक विधा के रूप में पनपने लगा था। प्रथमतः व्यंग्य 'हास्य' के रूप में ही जाना जाता था। कालांतर में हास्य और व्यंग्य दोनों का अलग विमर्श होने लगी।

भारतेन्दु युग में व्यंग्य लोकप्रिय था। स्वयं भारतेन्दु और भारतेन्दु कालीन सभी लेखकों ने व्यंग्य लेखन में महत्वपूर्ण कार्य किए हैं। उस समय की सामाजिक स्थिति ठीक नहीं थी। विसंगतियों से ग्रस्त भारत का चित्रण भारतेन्दु कालीन साहित्य में प्राप्त होता है। अंधेर नगरी, भारत दुर्दशा, वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति, विषस्य विषमौषधम् जैसे नाटकों में व्यंग्य की चुभती हुई व्यंजना दिखलाई पड़ती है।[1] उस काल में सामाजिक विसंगतियों पर व्यंग्य करना व्यंग्यकारों की आदत हो गई थी। भारतीय समाज की परिस्थितियों को देखकर क्रियाशील साहित्यकार चुप नहीं बैठ सकता था। अतः व्यंग्य रचना उस काल में लड़ने का हथियार बन गया। इसलिए व्यंग्य साहित्य प्रत्येक विधा के रूप में पनपने लगा।

समाज और लोगों के प्रति लेखक के लिए व्यंग्य अभिव्यक्ति का माध्यम बना। साहित्य की हर विधा, लघुकथा, कहानी, नाटक, कविता सभी में व्यंग्य की प्रयोजनशीलता बढ़ी। व्यंग्यकारों की एक बड़ा समूह व्यंग्य क्षेत्र से जुड़ गई जिन्होंने व्यंग्य लेखन में महारत हासिल की। इससे हिन्दी व्यंग्य साहित्य विधा को नई गति और दिशा प्रदान हुई। व्यंग्य लेखन में प्रतापनारायण मिश्र, बालमुकुन्द गुप्त, निराला, बेचन शर्मा उग्र, श्रीलाल शुक्ल, राधाकृष्ण, हरिशंकर परसाई, शरद जोशी और शैलेश चतुर्वेदी जैसे बहुत सारे साहित्यकार योगदान देते रहे। स्वातंत्र्योत्तर भारत में व्यंग्य को लेकर साहित्य में नूतन कलात्मकता और नवीन शैलिगत संस्कार देखने में आये। जीवन की यथार्थ जटिलताओं, तानाशाही समस्याएँ, अमानवीय क्रूरता को इंगित करने का नैतिक साहस व्यंग्य के रूप में दृष्टिगत हुआ। साहित्य में हरिशंकर परसाई ऐसे साहित्यकार हुये, जिन्होंने व्यंग्य के माध्यम से ही राष्ट्रीय ही नहीं अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त की और हिन्दी व्यंग्य विधा को प्रतिष्ठित किया। इसी विशिष्ट समाज सुधारी पथ पर अग्रसर डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी व्यंग्य विधा की स्थापना के कार्य में महत्वपूर्ण कार्य कर चुके हैं। सम्पूर्ण व्यंग्य साहित्य की श्रयोभिवृद्धि में ही डॉ बालेन्दु शेखर तिवारी अपने आप को समर्पित कर चुके थे। पत्रिका के क्षेत्र में संपादक, शैक्षणिक क्षेत्र में प्राध्यापक, शोध निर्देशक, साहित्य क्षेत्र में विमर्शक, अपने क्षेत्र में समीक्षक, संस्मरण लेखक, कवि, निबन्धकार, परिचर्चाओं में श्रेष्ठ वक्ता, दृश्यकाव्य में श्रेष्ठ एकांकीकार, गुरू, मित्र आदि रूपों में डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी प्रतिष्ठापित हो चुके हैं।

साहित्य सृजन में प्रारम्भ से ही व्यंग्य का अस्तित्व था। किन्तु रचनाओं में व्यंग्य का प्रभाव बाहर निखरकर नहीं आता था। आदिकालीन साहित्य में व्यंग्य की उपस्थिति गौण ही रही थी। मगर भाक्तिकाल में कबीरदास ने अपने विशाल दृष्टिकोण से समाज में निहित विसंगतियों को बाहर रखने की कोशिश की। कबीरदास ने अपने व्यंग्योक्तियों द्वारा समाजिक और धार्मिक दोनों क्षेत्रों को जागृत किया। आधुनिक युग में भारतेन्दु हरिचन्द्र एवं समकालीन साहित्यकार व्यंग्य को अभिव्यक्ति का अस्त्र बनाने के प्रयास में लगरहें। आदि साहित्यकारों ने विभिन्न विसंगतियों को देखकर उन पर प्रहार करने की कोशिश की। फिर स्वतंत्रता की छाह साहित्य की दिशा बदल

डाली। डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी का अभिप्राय है कि"भारतेन्दु युगीन व्यंग्य साहित्य सीधा निराला के पास आ गया। निराला के पश्चात् व्यंग्य की पड़ताल की जाये, तो वह सीधे आजादी प्राप्ति के मोहभंग के पश्चात् दिखाई देता है। स्वातंत्र्योत्तर काल में विरूपताओं के इस वातावरण को महज व्यंग्य के जरिये ही हो सम्प्रेषित किया जा सकता था और व्यंग्यकारों ने इस क्षेत्र में महारत हासिल की है। आज जब कि सम्पूर्ण समाज, व्यवस्था और शासनतंत्र शुरु से लेकर आखिर तक भ्रष्ट, कलुषित और अमानुषिक है तो साहित्यका प्राथमिक कर्तव्य यही है कि वह पहले हथियार की भांति प्रयुक्त हो। अब व्यंग्य की तलवार की जरूरत पहले है, उसके बाद ही फूलों और तितलियों का समय आएगा।"[2]

व्यंग्य की परिभाषा करते हुए डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी कहते हैं कि, "व्यंग्य एक विशिष्ट समाजधर्मी प्रेक्षण विधि अथवा एक विशिष्ट मानसिक भंगिमा है जिसका उद्भव अंतर्विरोधों के कारण होता है और जिसमें व्यक्ति और व्यवस्था विशेष के दौर्बल्य की आक्षेपात्मक अभिव्यक्ति द्वारा परिवर्तन का अभिष्ट पूर्ण होता है।"[3] इस परिभाषा के विश्लेषण के आधार पर देखा जाए तो व्यंग्य के प्रति डॉ. तिवारी का समर्पण भाव एवं व्यंग्य में ही अवदान स्पष्ट हो जाता है। डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी व्यंग्य की हर विधा में सृजन कार्य किया है। व्यंग्यालोचन के द्वारा व्यंग्य साहित्य को 'विधा' के रूप में प्रतिष्ठित किया है। व्यंग्य एकांकी, व्यंग्य कविता, व्यंग्य पत्रकारिता, व्यंग्य समीक्षा जैसे अनेक विधाओं में सृजन कर उसे शोध का माध्यम बनाया। इसके साथ ही व्यंग्य को स्वतंत्र विधा निरूपित करते हुएअनेक उदाहरण सहित व्याख्याओं को प्रस्तुत किया है।

व्यंग्य विधा की प्रतिष्ठापना के लिए डॉ. तिवारी के प्रयत्नों को इन व्याख्याओं में देख सकते हैं

१. "आजाद देश में आदमी कुछ भी कहने के लिए आजाद होता है, लेकिन किसी रचना विशेष को विधा के रूप में स्थापित करने का कार्य इतनी स्वच्छता के साथ नहीं होता। जब किसी विशिष्ट रूप में रची जानेवाली अभिव्यक्ति संख्या और प्रभाव, संप्रेषण और रूचि के स्तर पर प्रौढ़ता का परिचय देने लगती है और अनुभव एवं अभिव्यक्ति को एक कर देने की चेष्टा एक नए फार्म के रूप में सामनेआती है, तब उसमें विशेषता देखी जाती है, तब वह विशिष्ट विधा की मान्यता प्राप्त कर देने की अधिकारी हो जाती है।"[5]

२. "सच तो यह है कि जीवन में व्यंग्य की सबसे बड़ी उपयोगिता सामाजिक परिष्कार की है जिस प्रकार टीकाकरण किसी भयंकर रोग के प्रकोप से रोकता है और हम उस प्रकोप से बचे रहते हैं, उसी प्रकार व्यंग्य अपने आक्षेपों से सामाजिक अवगुणों के निराकरण के लिए शक्तिशाली मोर्चा बनाता रहता है।"[6]

३. "व्यंग्य वास्तव में है क्या? यह जानने का जब हम प्रयास करते हैं तो हमें पता चलता है कि व्यंग्य विसंगतियों की जमीन पर जिंदगी की तीखी आलोचना है।"[7]

४. "परिवार, समाज और राष्ट्र के लिए व्यंग्य उपयोगी आयुध का काम करता है। यह कटु सत्यों को सार्वजनिक रूप में प्रस्तुत कर व्यंग्य विरोधियों को तिलमिला देता है।"[8]

५. "व्यंग्य की सार्थकता विरोधियों को तिलमिला देने भर में नहीं है बल्कि उस मानसिकता के निर्माण में है जिसके अभाव में किसी परिवर्तन, किसी नव्यता की कल्पना नहीं की जा सकती है। अर्थात् व्यंग्य के प्रभाव से विशिष्ट मानसिकता का निर्माण होना ही चाहिये। ऐसी मानसिकता का निर्माण तभी हो सकता है जब कि व्यंग्य सत्यान्वेषी और अनुभवसिद्ध संवेदनात्मक सीख हो। सच्चा व्यंग्य वही हो सकता है जिसमें स्वभाव से आक्रोश हो, वह हल्का-फुल्का न होकर गंभीर हो और उसमें परिवर्तन कर डालने की क्षमता हो।"[9]

६. "हास्य के विभिन्न भेदों के अंतर्गत विनोद, व्यंग्य, चमत्कारिक विषय वचन, ताना, उपहास आदि की चर्चा की जाती रही है। मगर उपर्युक्त रूपों में केवल विनोदऔर हास्य के साथ संबंधित है, शेष सभी उपभेदों को व्यंग्य के साथ संबंधित मानना ही उचित होगा।"[10]

७. "व्यंग्य रचना के रूप में एक ऐसी नई चीज का प्रस्तुतीकरण हिन्दी में हुआ। जिसे न निबन्ध की कोटि में रखा जा सकता है और न कहानी की श्रेणी में। इन्हें केवल व्यंग्य की ही संज्ञा दी जा सकती है।"[11]

८. "आज व्यंग्य के लक्ष्यों में बदलाव आ गया है। उक्ति व्यंग्य अथवा स्थिति व्यंग्य की सीमाओं को लांघकर व्यंग्य ने सम्पूर्ण कृति को समेट लिया है।"[12]

९. "आज व्यंग्यकार वातावरण की विसंगतियों को देखकर, टटालकर उन पर आक्रमण करने की, आक्षेप करने की, प्रहार करने की खुली छूट मिली है। व्यंग्य विभिन्न विद्रूपताओं का सीधे सीधे जनमानस से साक्षात्कार करवाता है। अब लफ्फाजी और हास्य से भी व्यंग्य मुक्त हो चुका।"[13]

१०. "अब यह कहना क्रियाशील अर्थ नहीं रखता कि व्यंग्य लेखन की विशिष्ट शैली का नाम है, कि व्यंग्य हास्य का प्रहारधर्मी प्रभेद है, कि अब हिन्दी में व्यंग्य साहित्य का अभाव नहीं है। नये पुराने व्यंग्यकारों की लम्बी जमात ने अब कहानी और निबन्ध की पारम्परिक अवधारणा से व्यंग्य को निजात में जो भूमिका अदा की है, उसी ने व्यंग्य को विधा की प्रतिष्ठा, स्फूर्ति और लोकप्रियता दी है।"[14]

११. "अब व्यंग्य एक विधा है और व्यंग्य लेखन ने संकल्पना, अभिप्रेत एवं सोच के धरातल पर सिमटी हुई विधा चिंता से अपने को असम्पृक्त कर लिया है। सूक्ष्म वैज्ञानिक दृष्टि, बौद्धिक क्रौंच, सामयिक सजगता, प्रभावक प्रहार, पेरणापूर्ण परिवर्तनकामिता एवं व्यंग्य भाषा के मानक शैलीय उपकरणों से सज्जित व्यंग्य विधा समर्थ हो गई है।"[15]

उपरोक्त डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी के व्याख्यांशों को विश्लेषण करने पर पता चलता है कि विधा की प्रतिष्ठापना का कार्य साहित्य क्षेत्र में आसान नहीं था। हास्य से मिला जुला समझकर व्यंग्य को तिरस्कृत करनेवाले विद्वान कम नहीं थे। फिर भी प्रतापनारायण मिश्र, बालमुकुन्द गुप्त, निराला, बेचन शर्मा उग्र, श्रीलाल शुक्ल, राधाकृष्ण, हरिशंकर परसाई, शरद जोशी और शैलेश चतुर्वेदी सब साहित्यकार हिन्दी व्यंग्य विधा को प्रत्येक विधा के रूप में पहचानने का कार्य करते रहें। डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी व्यंग्य विधा को विषय की अभिव्यक्ति, सम्प्रेषण और प्रभाव का अच्छा माध्यम मानते थे।

स्वयं व्यंग्यकार होते हुए डॉ. तिवारी समकालीन साहित्यकारों से व्यंग्य विधा को प्रतिष्ठा दिलवाते रहे हैं साथ ही व्यंग्य के क्षेत्र में व्यंग्य समाजशास्त्रीय चिंतनों को दर्शाते हैं। आपके व्यंग्य में जहाँ विसंगतियों का साफ चित्र है, वहीं सामाजिक कल्याण की सिद्धि भी है। व्यंग्य की भाषा सहज, सरल और सुगम है। डॉ. तिवारी के व्यंग्य सत्य सहज होते हुए भी प्रहारक हैं। यही इनकी व्यंग्य की विशिष्टता है। साहित्य के हर प्रकार में व्यंग्योक्तियों से अलंकृत करनेवाले डॉ. तिवारी व्यंग्य विधा के विकास में श्रेष्ठ कार्य कर चुके हैं।

स्वयं डी. लिट् उपाधि के लिए "हिन्दी व्यंग्य लेखन का शैली वैज्ञानिक विश्लेषण" शोध प्रबन्ध प्रस्तुत कर उसमें व्यंग्य विधा के पक्ष में सशक्त तर्क प्रस्तुत किया है। डॉ. तिवारी स्वयं कहते हैं कि- "निश्चय ही व्यंग्य विधा की पहली पीढ़ी के रचनाकारों ने सशक्त रचनाएँ प्रस्तुत कर इस क्षेत्र को सम्मानित किया। पर यह भी कटु सत्य है कि उस समय इन लेखकों के प्रारम्भिक संकलन प्रायः कहानी संकलन, निबन्ध संकलन या हास्य-व्यंग्य के नाम से छपा करते थे।"[16]

इसी व्यंग्य विधा की स्थापना के संबन्ध में और हिन्दी व्यंग्य की विभिन्न दिशाओं और व्यंग्यालोचन अपेक्षित लोकप्रियता और ऊँचाई देनेवाले बहुआयामी रचनाकार और समीक्षक डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी के साथ व्यंग्य साहित्य की विभिन्न चिंताओं से संबन्धित सीधी बातचीत करने का मुझे शुभावसर प्राप्त हुआ था। इस साक्षात्कार का संवाद हिन्दी व्यंग्य के वर्तमान और आगामी कल के बारे में बहुत कुछ पहलुओं को उजागर करता है।

बदलते समय में व्यंग्य प्रासंगिक बना रहेगा : व्यंग्यकर्मी डॉ. तिवारी के साथ बातचीत

प्रश्न : आपने व्यंग्य रचनाकार और व्यंग्य समीक्षक के रूप में अपनी पचचान बनाई है व्यंग्य की ओर आपकी अभिरुचि का कारण क्या है?

उत्तर : बचपन से ही मेरी दिलचस्पी हास्यव्यंग्यात्मक रचनाओं में थी। तभी स्कूल के पाठ्यक्रम में शामिल बेढ़ब बनारसी की रचना बनारसी एक्का मुझे बहुत पसन्द थी। बाद में ऐसी अनेक रचनाओं और संकलनों को बहुत बड़े पैमाने पर पढ़ने का अवसर मिलता रहा एवं इस क्षेत्र अभिरुचि बढ़ती गई। लिखना किया तब भी परिवेश की विसंगतियों में सुधार की कामना से व्यंग्य लिखने से बेहतर कुछ नहीं सूझा। मुझे हमेशा सैद्धांतिक गम्भीरता और काल्पनिक उड़ानों परहेज रहा है। जब आप के चारों ओर असंगतियों का महा जाल फैला हो और परिस्थितियाँ कुछ भी काल्पनिक सोचने लिए मना कर रही हों तब कवि इन सबको भूल कैसे फूलों, तितलियों और भारी-भरकम उपदेशों–विचारों की दुनिया में जा सकता है। ऐसे माहौल में व्यंग्य ही सबसे ईमानदार और प्रासंगिक हो सकता है।

प्रश्न : साहित्य में व्यंग्य की पहचान किस प्रकार हो सकती है?

उत्तरः मेरी मान्यता कि व्यंग्य शैली और विधा दोनों रूपों में साहित्य अपनी पहचान बनाने में समर्थ है। बिहारी के दोहों में, रामचरित मानस के कई प्रसंगों में, प्रेमचंद और यशपाल के कथा-साहित्य में, प्रसाद और लक्ष्मी नारायण लाल के कथा-साहित्य में, प्रसाद और लक्ष्मी नारायण लाल के नाटकों में, यथावसर व्यंग्य शैली के रूप में उपलब्ध है। आप देख सकते हैं कि व्यंग्य शैली का उपयोग सभी भाषाओं के लगभग सभी व्यंग्यकारों ने अपनी रचनाओं में आवश्यकतानुसार किया है। व्यंग्य को शैली के रूप में उपस्थित करने में व्यंजना, शब्द शक्ति का सहयोग, शब्द चयन, भाषिक विचलन और शैली के अन्य उपकरण करते हैं। इस रूप में व्यंग्य एक शैली है, लेकिन हिन्दी तथा कई अन्य भाषाओं में व्यंग्य एक विधा रूप प्रतिष्ठित हुआ है। इस विधा ने व्यंग्य साहित्य की एक विलक्षण पहचान स्थिर की है।

प्रश्न : व्यंग्य एक साहित्यक विधा है - इस बात को आप किस प्रकार स्थापित करना चाहेंगे, जबकि अभी भी हिन्दी समीक्षकों का एक बड़ा समूह इस पक्ष में नहीं हैं।

उत्तर : हिन्दी समीक्षक-समुदाय का बहुलांश अब भी पुराने साहित्यालोचन में बंधा है और नई साहित्यक विधाओं को स्वीकारने से हिचकता है। जब किसी किस्म की रचनाएँ प्रचुर मात्रा में लिखी जाने लगती हैं, तब रचना की वह किस्म धीरे-धीरे विधा बन जाती है। उपन्यास, कहानी, निबन्ध सबका यही इतिहास है। पिछले पचास वर्षों में हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं में संस्मरण, आत्मकथा, यात्रावृत्त, जीवनी, ललित निबन्ध जैसी कई नई विधाएं उभरकर आई है। व्यंग्य भी ऐसी ही एक नई विधा है। हिन्दी में इस विधा का श्रीगणेश उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और उनके समकालीनों ने किया था, लेकिन इस विधा को वास्तविक विस्तार और वैविध्य १९६० के बाद हिन्दी के व्यंग्यकारों ने दिया। प्रारम्भ में परसाई और शरद जोशी के सामने भी स्पष्ट नहीं था कि ये किस नई विधा को उँचाई दे रहे हैं। लेकिन १९७५ के बाद तो यह विधा पूरी तरह प्रतिष्ठित हो गई। निबन्ध और कहानी से सर्वथा भिन्न, व्यंग्य भाषा में व्यंग्यात्मक उद्देश्य से रचित यह विधा निश्चय ही एक स्वतंत्र साहित्यक विधा है।

प्रश्न : मेरा अनुमान है कि व्यंग्य विधा को यह प्रतिष्ठा मुख्य रूप से आपकी पीढ़ी के समीक्षकों ने ही दिलाई।

उत्तर : आपका अनुमान ठीक ही है। प्रारम्भ में व्यंग्यालोचन के क्षेत्र में डॉ. शंकर पुणतांबेकर, डॉ. श्यामसुन्दर घोष, डॉ. नरेन्द्र कोहली ने कार्य किया। कालांतर में मेरे समकालीन डॉ. प्रेम जनमेजय, डॉ. हरीश नवल, डॉ. तिप्पेस्वामी, डॉ, मलय, डॉ. हरिशंकर दुबे आदि लोगों की कतार सक्रिय हुई।

प्रश्न : इन व्यंग्यालोचकों ने हास्य और व्यंग्य के साम्य-वैषम्य को भी स्पष्ट किया है। आपकी दृष्टि में हास्य और व्यंग्य का क्या सम्बन्ध है?

उत्तर : शास्त्रकारों ने व्यंग्य को हास्य का एक प्रभेद ही सूचित किया है, लेकिन वर्तमान साहित्य में उद्देश्य के स्तर पर हास्य और व्यंग्य के बीच दूरियाँ बढ़ती गई है। हास्य का उद्देश्य केवल मनोरंजन करना होता है जबकि व्यंग्य का उद्देश्य परिवेश की विसंगतियों का परिष्कार होता है। हास्य लेखक हँसाने के उद्देश्य से आलम्बन और भाषा चुनता है, जबकि व्यंग्यकार प्रहारात्मक उद्देश्य से विषय और शैली का चयन करता है।

प्रश्न: आपने अभी कहा कि व्यंग्य का उद्देश्य सुधार और प्रहार है क्या समाज और व्यक्ति पर व्यंग्य का प्रभाव पड़ता है? क्या व्यंग्य वास्तव में परिवर्तन उपस्थित करता है?

उत्तर : व्यंग्य के प्रभाव की चर्चा करने से पूर्व में आपसे उन उपदेशकों की चर्चा करना चाहता हूँ जिनका व्याख्यान सुनने असंख्य लोग एकत्र होते हैं। ऐसे उपदेशकों के अमृत वचन और धर्मग्रंथों की आदर्शवाणी को अनगिनत लोग सुनते-पढ़ते हैं। लेकिन उन पर अमल कितने प्रतिशत लोग करते हैं? यही स्थिति व्यंग्य के प्रभाव की भी है। अपेक्षाएँ तो बहुत सारी हैं और लक्ष्य भी एकदम स्पष्ट होता है, फिर भी वांछित परिवर्तन और सुधार नहीं होता। यदि व्यंग्य के जरिए सुधार और बदलाव इतना तीव्र होता, शायद आज पाँच सौ वर्ष पहले कबीर, बसव और वेमना के जमाने में ही इस देश से जातिप्रथा, अंध विश्वास, आडम्बर और छूआछूत का लोप हो गया होता। लेकिन ऐसा कहाँ हुआ? विसंगतियाँ बढ़ती ही गई हैं तब मे आज तक।

प्रश्न : इसका अर्थ यह हुआ कि आपके अनुसार व्यंग्य समाज या व्यक्ति में कोई सुधार या परिवर्तन नहीं होता?

उत्तर : जितना चाहिए, उतना निश्चय ही नहीं होता। व्यंग्य से अपेक्षाएँ तो बहुत सारी होती हैं, लेकिन प्रभाव कुल मिला कर गैंडे की खाल में आलपीन चुभाने जैसा ही होता है।

प्रश्न : आपकी इस निराशा से तो संकेत मिलता है कि अब व्यंग्य साहित्य का काल लाभ ही नहीं है। व्यंग्यकारों को व्यंग्य लिखना छोड़ देना चाहिए क्या?

उत्तर : पंचतंत्र में विष्णुशर्मा ने साधु और बिच्छू की जो कथा कही है वही आदर्श है व्यंग्यकार के कर्म का अपना धर्म न तो व्यंग्यकार छोड़ सकता है और न विसंगतियाँ अपने कर्म से विरत हो सकती हैं। सब अपने-अपने धर्म और कर्म का पालन करते हैं। व्यंग्यकार तो आशावादी और परम सकारात्मक होता ही है।

प्रश्न : आधुनिकता और व्यंग्य का क्या सम्बन्ध है?

उत्तर : आधुनिकता नहीं, उत्तर आधुनिकता कहिए। इक्कीसवीं शताब्दी विस्तार और सूचना विस्फोट के समकालीन परिदृश्य में संकटों और नई विसंगतियों को सामने रखा है। ऐसे उत्तर आधुनिक दौर में व्यंग्यकारों के सामने भी नए किस्म की चुनौतियां उभर कर आई हैं। इस समय के नए साहित्यकारों को इन नई चुनौतियों से संघर्ष करना है। उत्तर आधुनिक समय के संकटों, विखंडित मूल्यों और विसंगतियों के बीच व्यंग्य को विषय और शैली की नई भूमिकाओं की खोज करनी है।

प्रश्न : अब एक सवाल लघु व्यंग्य के बारे में, क्योंकि बहुत पहले आपने ही 'लघुव्यंग्य' का नारा दिया था। अब आप 'लघुव्यंग्य' के बारे में क्या सोचते हैं ?

उत्तर : मेरी आधार मान्यता आज भी नहीं बदली है कि ऐसी तमाम लघुकथाओं को'लघुव्यंग्य' कहना चाहिए जिनके कथ्य, शिल्प और लक्ष्य के केन्द्र में व्यंग्य हो। वास्तव में १९८० के आसपास हिन्दी लघुकथा के उत्कर्ष काल में बड़ी संख्या में व्यंग्य प्रधान लघुकथाएँ लिखी जा रही थी। ऐसी ही रचनाओं को मैंने लघुकथा से अलग एक नई पहचान दी। उन दिनों से अबतक लघुव्यंग्य की चर्चा लगातार होती रही है।

प्रश्न : और अब कुछ सवाल आपके अपने सृजन-संसार के संदर्भ में जैसे, आपके व्यंग्यकर्म का लक्ष्य क्या है? मेरा मतलब यह कि अपनी व्यंग्य रचनाओं के माध्यम से आप समाज को क्या देना चाहते हैं?

उत्तर : हर व्यंग्यकार समाज को बेहतर बनाने का सपना देखता है। वह समाज और व्यक्ति की बुराईयों का आपरेशन सर्जन की तरह करता है और रोगमुक्त समाज की नींव रखता है। मेरी व्यंग्य रचनाओं का उद्देश्य भी यही है। अपने उद्देश्य की सिद्धि में मेरी रचनाएँ कितनी सक्षम है यह तो पाठक, श्रोता या दर्शक ही बता सकते हैं।

प्रश्न : व्यंग्य की प्रस्तुति के लिए कला-पक्ष के किन तत्वों पर आपने विशेष ध्यान दिया है?

उत्तर : व्यंग्यकर्म वास्तव में कलाकारी की अपेक्षा बौद्धिक समझदारी की देन है। इसीलिए व्यंग्य लिखने के लिए कला पक्ष के उपकरणों की अपेक्षा बौद्धिक सावधानी के तत्वों की अधिक अवश्यकता होती है। मैंने अपनी व्यंग्य रचनाओं के सृजन के लिए बौद्धिक समझदारी को जगानेवाले भाषिक उपकरणों पर हमेशा ध्यान दिया है। शब्द चयन, वाक्य विन्यास, विशेषण वक्रता, अप्रस्तुत विधान, विचलन और समानान्तरता द्वारा व्यंग्य रचना को सजाने का प्रयत्न मैंने जानबूझकर किया है।

प्रश्न : अपने व्यंग्य-चिंतन और व्यंग्यालोचन के बारे कुछ निर्णयात्मक बातें समझाइए।

उत्तर : हिन्दी में व्यंग्यालोचकों की अपनी छवी अब तक नहीं बन सकी है। सौ से अधिक अनुसंधाताओं ने अब तक हिन्दी व्यंग्य के विविध पक्षों पर शोध कार्य किए हैं और लगभग इतनी ही समीक्षा पुस्तकें भी प्रकाशित हैं। फिर भी व्यंग्यालोचन हिन्दी में उपेक्षित जैसा है। इस उपेक्षा का दंश मुझे भी झेलना ही पड़ा है। बहुत नया सोचकर और लिख कर भी मेरे जैसे व्यंग्यालोचक को अपनी व्यंग्य-समीक्षाओं के लिए प्रकाशकों की तलाश करनी पड़ती है। प्रकाशक व्यंग्य रचनाओं और प्रयोजनमूलक हिन्दी भाषाविज्ञान, काव्यशास्त्र पर अकादमिक पुस्तकें निकालने को तैयार हैं। लेकिन व्यंग्यालोचन की पुस्तकों के लिए बाजार नहीं बना सके हैं। परिणामतः व्यंग्यालोचन के क्षेत्र से मेरे जैसे सभी लोग निराश हैं।

प्रश्न : अंत में, एक परम्परागत किस्म का सवाल कि आप हिन्दी व्यंग्य के भविष्य के बारे में क्या सोचते हैं? एकदम नए व्यंग्यकारों को कुछ संदेश देना चाहते हैं?

उत्तर : हिन्दी व्यंग्य का भविष्य तब तक बना-सँवरा रहेगा जब तक इस देश की राजनीति और व्यवस्था में भ्रष्टता रहेगी। लेकिन बदलते समय के साथ व्यंग्य के नए-नए आलम्बन भी उभरते गए हैं। एकदम नई पीढ़ी के व्यंग्यकारों को अपने वर्तमान और भविष्य के अनुरूप नए तथ्यों, नए को केन्द्र में रख कर भाषा के नए-नए हथियारों का उपयोग करना होगा। तभी भविष्य का व्यंग्य लेखन अधिक प्रहारक, अधिक धारदार और अधिक जीवंत होगा। आलोचक के रूप में, पुस्तक क्षेत्र में समीक्षक के रूप में, निबन्धकार, संस्मरण लेखक, एकांकिकार, कवि, पत्रिकाओं से लेकर सभी क्षेत्रों में व्यंग्य को अपनाकर कार्य कर चुके हैं।

निष्कर्ष के रूप में डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी व्यंग्योत्पत्ति की परिभाषा देते हुए कहते हैं कि व्यंग्य लेखन कार्य लिरिकल उच्छ्वास नहीं है-एक मर्मज्ञ आधुनिक परिवर्तनकामी दृष्टि का परिणाम है। नारों और अतिसरलीकृत फार्मूलों, विसंगतियों और लफ्फाजियों के घटाटोप वातावरण में कुछ नया, सच और ईमानदार देने की बेचैनी व्यंग्यकार की चारित्रिक अस्मिता है। यह कार्य अस्वभाविक नहीं है कि हिन्दी की व्यंग्य-सर्जना का सम्पूर्ण वितान रचनाकार के और सम्प्रेषण की विलक्षणताओं पर आधृत है।[7]

भाषा का सहारा लेकर व्यंग्य की प्रस्तुति होती है। इसीलिए डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी व्यंग्य की अच्छाईयों और बुराईयों का विश्लेषण करते हैं। उनके अनुसार व्यंग्य को वैभवशाली चित्रशाला माना जा सकता है। व्यंग्य कर्म संबन्धी विवेचन का सार यह है कि व्यंग्य को विधा के रूप स्थापना एवं उसका शास्त्रीय विवेचना है। आपकी कविताओं और एकांकियों भी व्यंग्यात्मकता नज़र आता है। व्यंग्य हास्य का शास्त्रीय विभाजन एवं रचना पर दोनों का अद्भुत सम्मिलन उनके व्यक्तित्व की अनूठी विशेषता कही जाएगी। वहीं साहित्यकार रूप उनकी उपलब्धियाँ कम नहीं हैं। व्यंग्य, लघुव्यंग्य, नाटक, समीक्षा, कविता, परिचर्चा, संस्मरण, प्रयोजन मूलक अनुवाद विज्ञान, शोध आदि क्षेत्रों में भी डॉ. तिवारी सिद्धहस्त हैं। इसके साथ साथ पत्रकारिता,संस्मरण, परिचर्चा और भूमिका के क्षेत्र में भी तिवारी कार्य चुके हैं।

टिप्पणियाँ

1. हिन्दी व्यंग्य कर्म एवं समकालीन परिदृश्य, सं-डॉ. विनयकुमार पाठक, श्रीमती जयश्री शुक्ल, शीर्षक-व्यंग्य विधा और शैली, डॉ. शारदा प्रसाद, पृष्ठ २९
2. हिन्दी व्यंग्य कर्म एवं समकालीन परिदृश्य, सं-डॉ. विनयकुमार पाठक, श्रीमती जयश्री शुक्ल, शीर्षक-व्यंग्य विधा और शैली, डॉ. शारदा प्रसाद, पृष्ठ २९,
3. हिन्दी व्यंग्य कर्म एवं समकालीन परिदृश्य, सं-डॉ. विनयकुमार पाठक, श्रीमती जयश्री शुक्ल, शीर्षक-व्यंग्य विधा और शैली, डॉ. शारदा प्रसाद, पृष्ठ ३०.
4. हिन्दी व्यंग्य के प्रतिमान-डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी, पृष्ठ ४.
5. नवभारत टाइम्स पत्रिका, जुलाई १९८९, पृष्ठ ७.
6. हिन्दी व्यंग्य के प्रतिमान डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी, पृष्ठ ३३.
7. हिन्दी व्यंग्य के प्रतिमान डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी, पृष्ठ १०
8. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य में हास्य और व्यंग्य - डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी, पृष्ठ ६१.
9. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य में हास्य और व्यंग्य डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी,पृष्ठ ६९.
10. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य में हास्य और व्यंग्य डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी, पृष्ठ ६९-७३.
11. गोपनीय गृह उद्योग- डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी, पृष्ठ १०४-१०५.
12. हिन्दी व्यंग्य के प्रतिमान डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी, पृष्ठ ५०
13. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य में हास्य और व्यंग्य डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी, पृष्ठ १९९.
14. हिन्दी व्यंग्य के प्रतिमान डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी, पृष्ठ ७३.
15. हिन्दी व्यंग्य लेखन का शैली वैज्ञानिक विश्लेषण-शोध प्रबन्ध, डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी, पृष्ठ ४१.
16. हिन्दी व्यंग्य लेखन का शैली वैज्ञानिक विश्लेषण-शोध प्रबन्ध, डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी, पृष्ठ ४५.
17. बालेन्दु शेखर तिवारी का व्यंग्यकर्म चिंतन और सृजन पृष्ठ ९९.